**International Journal of Hindi Research**
**ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22**
**Received: 01-10-2020; Accepted: 15-10-2020; Published: 04-11-2020**
**www.hindijournal.com**
**Volume 6; Issue 6; 2020; Page No. 09-12**

# पारिस्थितिक संघर्ष और संजीव के उपन्यास

**Tessy Poulose**

Assistant Professor, Department of Languages, Naipunnya Institute of Management and Information Technology, University of Calicut, Kerala, India

## प्रस्तावना

पृथ्वी की संरचना विधाता ने बड़े कौशल से निर्मित की है। संरक्षनात्मक वातावरण में मनुष्य एवं अन्य जीवों को हर क्षेत्र में जीने का अवसर दिया है। विभिन्न क्षेत्रों का भिन्न भिन्न प्रकार का जीवन है क्योंकि इन क्षेत्रों का वातावरण और जलवायु अन्य क्षेत्रों से पूर्णतः भिन्न होती है। एक क्षेत्र में जिस तरह का वातावरण होता है उसी के अनुरूप उस धरती में वनस्पतियां पैदा होती है। इसी के अनुरूप उन क्षेत्रों में जन्म लेने वाले जीव जंतुओं का जीवन स्तर और रहन-सहन का ढंग बन जाता है। आज पृथ्वी की स्थिति लगभग खतरे में है। मनुष्य ने स्वयं प्रकृति में असंतुलन पैदा कर ऐसा खतरा उत्पन्न कर लिया है। उसने अपने सुख के लिए पृथ्वी के उपयोगी भागों का दोहन किया और प्रगति के नाम पर पृथ्वी को अपने अनुकूल बनाने की कोशिश की। फल स्वरुप जितनी तेजी से मानव ने भौतिक उन्नति की उतनी ही तेजी से अपने जीवन दायक आवश्यक तत्व जैसे शुद्ध हवा, शुद्ध जल, उपजाऊ मिट्टी आदि के सर्वश्रेष्ठ गुण खो दिए। आज की भोगवादी सभ्यता ने मनुष्य को प्रकृति का दुश्मन बना दिया है। अपने सुख के साधन जुटाने के लिए मनुष्य ने प्रकृति के साथ क्रूर अत्याचार किया है। पृथ्वी पर होने वाले प्रतिकूल परिवर्तनों ने अब विश्व मानव को यह चेतावनी दी है कि अगर इस पृथ्वी के संतुलन को नहीं संभाल लेंगे तो यह पृथ्वी रहने योग्य नहीं रहेगी। आज का पर्यावरण रावण का रूप लेकर विश्व के सामने एक भयंकर खतरे के रूप में खड़ा है। इस खतरे से संपूर्ण भूमंडल का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा।

संजीव के उपन्यासों में पारिस्थितिक संदर्भ का जिक्र हुआ है। मुख्यत: `सावधान! नीचे आग है`, `धार`, `पांव तले की दूब`, `जंगल जहां शुरू होता है` आदि उपन्यासों में परिस्थिति संबंधी घटनाओं का चित्रण हुआ है। भूमंडलीकरण से उत्पन्न विकृतियों का प्रभाव जीवन के हर स्तर पर दिखाई देता है। उसका बुरा प्रभाव सीधा परिस्थिति पर ही पड़ रहा है। पश्चिमी औद्योगीकरण का लक्ष्य है ज्यादा से ज्यादा उपभोग की वस्तुओं का वृहद पैमाने पर उत्पादन। इसके लिए विशाल मात्रा में संसाधन के रूप में माल और ऊर्जा की जरूरत है। इसी लक्ष्य के लिए मनुष्य भौतिक पदार्थों का रूपांतरण करता है। `सावधान! नीचे आग है` उपन्यास में अशास्त्रीय तौर पर होते खनन की वजह से धनबाद, चंदनपुर, आसनसोल आदि इलाकों की आरण्य संस्कृति पर पड़ते पारिस्थितिक आघातों का दस्तावेज प्रस्तुत किया गया है। लालची मानव की स्वर्थता के कारण इस आरण्य संस्कृति की तबाही हो रही है। खनन उद्योग की गतिविधियां बहुत बड़े भू-भाग को प्रभावित करती है। खनन के लिए जंगल साफ कर दिए जाते हैं और नंगे हो चुके पहाड़ों में भूस्खलन आदि दुर्घटनाएं बढ़ जाती है। कोयला खानों के आसपास बिखरी काली धूल के नीचे दबकर धरती निर्जीव हो जाती है। जीव जगत और प्राणी जगत के जीवन का आधार मानी जाने वाली उपजाऊ मिट्टी भी बुरी तरह से प्रभावित हो जाती है। उपन्यास के आरंभ में चंदनपुर के कोयला अंचल से दुष्प्रभावित झरिया शहर की हालत को उपन्यासकार ने दिखाया है। "आग की नदी दामोदर और धुआं का शहर झरिया! कुहासा नहीं, धुआंसा! धूल, धुआं और कुहासा - इन से मिलकर एक शब्द बनता है धूआंसा। दोनों और खंड - खंड जुड़ते-टूटते हार्ड - कोक प्लांट की दैत्यमुखी ज्वाला की कतारें। बीच-बीच में लोहे के लंबे खांचे पर टंगी आकाश - चरखी से कोलियरियों के टॉप गियर, कोयले के स्तूपाकार मलबे और दूहें। श्मशान की चिता की तरह जगह जगह जलते कोयले।.....जहां- तहां रेल लाइनों के जाल, पंक्ति - पंक्ति खड़ी मालगाड़ियां, उच्छवास फेंकते स्टीम इंजन, डिब्बिनुमा मकान और सर पर रह रहकर काले खौफनाक परिंदे- सी गुज़रती रोप-वे की डोलियां। " (1)

धार' में कोयल खदानों के दूषित परिवेश में सटकर बसे बासंगड़ा अंचल का मूर्त रूप उपन्यासकार ने पेश किया है। इस क्षेत्र में अक्सर काले साए मंडराते हैं। कोयला खदान और कारखानों के परिणाम स्वरुप इधर का प्राकृतिक परिवेश प्रदूषित हो गया है। धूप और धुएं में जलती बस्तियां, अधनंगे बच्चे, दमघोटू वातावरण, खांसते लोग, मरियल कुत्तों की तरह पेड़ और गंदगी का यहां साम्राज्य है। "न दिन है, न रात, दोनों की दहलीज पर संथाल परगना का पूरा नंगा इलाका घायल गुर्राते सूअर की तरह पडा है। नंगी-अधनंगी पहाड़ियां जहां-तहां खड़े शाल, महुए, खजूर और ताड़ के पेड़, ढेर की झाड़ियां, बलुई बंजर धरती, सूखती नदियां, सूखते कुएं तालाब, भयंकर पोखरियां खादें जहां - तहां सोए पड़े मुर्दे से लोग।"(2) `पांव तले की दूब` में विस्थापन की त्रासदी मुख्य रूप में दिखाई गई है। जंगल की निरंतर कटाई के कारण पारिस्थितिक तंत्र बिल्कुल उलझ गया है। बिजली कारखाने से निकलती प्रदूषित हवा लोगों को सिर्फ बीमारी ही देती है। कारखाने से बहने वाले दूषित पानी के कारण नदी का पानी जहरीला बन जाता है और गांव के लोग कई रोगों का शिकार बन जाते हैं। "यह रोग तो मनसा नाले के चलते हैं। बिजली के कारखाने का सारा गंदा पानी बहता है इसमें। और उससे भी जहरीली है हवा। चिमनियों का सारा ज़हर फेंकती रहती है इधर।"(3) कारखाने तथा जंगल की सफाई के परिणामस्वरुप जो भयानक असर जंगल की पारिस्थितिकी पर पड़ता है, इसका यथार्थ रूप इस उपन्यास में मिलता है। `जंगल जहां शुरू होता है` उपन्यास का केंद्रीय पात्र कोई व्यक्ति न होकर जंगल ही है। पूरे उपन्यास में जंगल अपने विविध रूपों में एवं छवियों के साथ खुलता है और यह एक आरण्य गाथा बन जाता है। मिनी चंबल कहलाए जाने वाले पश्चिमी चंपारण क्षेत्र में विकसित उपन्यास का हर पात्र जंगल को जीतने का प्रयास कर रहा है। उपन्यास के शीर्षक के साथ जुड़ा `जंगल` पारिस्थितिक संदर्भ को उजागर करता है। प्रकृति से पृथक होकर

मानव का अस्तित्व नामुमकिन है। अक्सर मानव इस हकीकत से बिल्कुल मुंह मोड़ता है कि वह प्राकृतिक धरोहर को बचाने के बजाय उसे और कलुषित बनाता ही रहता है। शायद लोगों की अशिक्षा एवं अंधविश्वास ही इसके लिए उत्तरदायी हैं। उपन्यास में बिसराम की दुलारी को सांप काटता है। बनकटा गांव के बुजुर्गों की राय में लाश को न जलाया जा सकता है, न गाडा जा सकता है। उनकी रूढ़िगत मान्यता के अनुसार लाश को केले के तने से लपेट कर गंगा नदी में प्रवाहित किया जाना चाहिए। वे मानते हैं कि गंगा मैया खुद ही उस विष को खींच लेती है और मुर्दा जी उठता है। मगर वे इस तथ्य से अनभिज्ञ है कि इस प्रकार नदी में लाशों को प्रवाहित करने से जल प्रदूषित होता है। लाशों के सड़ने से वायु भी बराबर मलिन हो जाती है।

**पारिस्थितिक संकट के खिलाफ संघर्ष**

विकास के नाम पर वायु, पानी और मिट्टी का प्रदूषण आज सहज स्वाभाविक प्रक्रिया बन गई है। संजीव के उपन्यास इसके सशक्त उदाहरण है। 'धार` में बासंगड़ा गांव में हरी भरी जमीन में तेजाब का कारखाना खुलता है। इसके परिणामस्वरूप वहां के खेत, कुआ सब खराब हो जाते हैं, फसल सूख जाती है तथा लोगों को पीने का पानी भी नहीं है। पेड़- पौधे, कुएं, तालाब यहां तक कि मनुष्य भी कारखाने की दूषित हवा से जल रहे हैं। लोग खांसी, उबकाई जैसी बीमारियों से पीड़ित है। तेज़ाब की फैक्टरी से निकलने वाली ज़हरीली हवा के कारण जंगल, जानवर एवं मानव भी मुरझा रहा है। मैना और अविनाश शर्मा के नेतृत्व में आदिवासी लोग फैक्टरी के खिलाफ संघर्ष करते हैं। मैना का पिता टैंगर ने इस फैक्टरी के लिए ज़मीन दिया था, जिनका उद्देश्य था - लोगों की बेरोजगारी तथा भूख मिटाना। मगर इस ज़हरीली फैक्टरी को सहायता देने पर मैना और उसकी मां उसके खिलाफ हो गई। मैना की मां को शोषकों ने डायन घोषित करके गांव से भगा दिया था। मैना अब इस संघर्ष को अविनाश शर्मा के नेतृत्व में आगे बढ़ा रही है। टेंगर अब इस फैक्टरी का चौकीदारी भी कर रहा है। मैना और टैंगर के बीच इस विषय को लेकर नाराजगी थी। " मैना का ज़िद है कि ई फैटरी को तोड़ के रहेगा और बाप का ज़िद कि जो तोड़ने आएगा, उसका सर तोड़ देगा।"(4) फैक्टरी के खिलाफ के इस संघर्ष में एक और महेंद्र बाबू, पंडित सीताराम, टैंगर तथा मैना का पति फोकल जैसे शोषक था जिनके खिलाफ मैना और अन्य गांव वाले अपना विरोध दिखाते थे। अपना पति फोकल को भी इस विषय पर मैना ने छोड़ दिया था क्योंकि फोकल महेंद्र बाबू और पंडित सीताराम का चमचा था। मैना सभी गांव वालों को लेकर फैक्टरी के खिलाफ नारे लगा रहे थे "भाइयों, काम छोड़के निकल आवो, ऊ फैटरी नहीं, हम सबकी मौत है।"(5) मैना के संघर्ष के बारे में हैदर मामा कहते हैं: "उसी दिन मैना फोकल का संग छोड़कर डब्बे में रहने लगी। रात होते ही मैना कुल्हाड़ी लेकर फैक्टरी का टंकी तोड़ने के लिए निकल पड़ती और उधर टेंगर रात - रात भर लाठी लेकर फैक्टरी का चक्कर काटता पहरा देता - धरमजुद्ध। इसी वारदात में मैना को जेल हुआ, कोर्ट में फोकल और टैंगर भी मैना के खिलाफ गवाही दिए।"(6) बासांगड़ा गांव का पर्यावरण पूरी तरह बिगड़ चुका है। फैक्टरी से निकलती दूषित हवा तथा अन्य प्रदूषण के कारण उस गांव का चेहरा ही बदल गया है। उपन्यास में अविनाश शर्मा प्रदूषित बासंगडा गांव के हालात का परिचय मंगर को देता है। " इस छटपटाती बस्ती को गोड्डा जाने वाली सड़क के वाहनों की घरघराहट रात - दिन खरोंचती रहती है और दूसरी ओर से बगल से गुज़रने वाली मेन लाइन की रेलगाड़ियां जब - तब सटकारा करती है। मगर बासंगड़ा सचमुच का बांस गड़ा है, उठकर भागता भी नहीं, यहीं पड़े - पड़े मौत का इंतजार करता रहता है। ..... हवा जब गांव की ओर घूमती है तो अपनी रही - सही जान लिए बासंगड़ा खांसता है ... ना, बासंगड़ा नहीं, उनकी उंगली फैक्टरी की ओर उठ रही थी, वह उजली - उजली फफूंदी की झुर्रियों में लरजती तेज़ाब की फैक्टरी खांसती है, अपनी धीमी बत्तियों की बुझी आंखों की चिलम में गांव को भरकर पीती और सों - सो की खुश्क आवाज़ के साथ उजला - उजला ज़हर उगलती हुई फैक्टरी।"(7)

आदिवासी लोग अब इस बात पर ज़िद पकड़ चुके थे कि इस ज़हर की फैक्टरी को अपने इलाके में और नहीं चलने देंगे - ना खुद इस में काम करेंगे, ना औरों को भी काम करने देंगे। उन्हें बस अपनी ज़मीन की सलामती चाहिए, अपनी खेती बच जाए, मजदूरी नहीं चाहिए। इस विषय पर क्रम - क्रम से कई मीटिंगें हुई और आदिवासी लोग अपने ज़िद पर अटल थे। फोकल और टैंगर की बात कोई सुनता नहीं था। इस प्रतिकूल परिस्थिति पर महेंदर बाबू और पंडित सीताराम धनबाद जाकर यूनियन के कुछ गुंडों को ले आए। डरावनी मुंह-देह वाले इन गुंडों को देखकर बांसवाड़ा में खलबली मच गई। एक क्षण के लिए मैना भी डर गई और अन्य लोग भी। मगर अब एक-एक कर अपने अस्त्र-शस्त्र संभाल रहे थे। "क्या करें ? कहां से ले आए पानी? कुएं, तालाब सब में तो तेज़ाब है। स्टेशन पर सिपाही पानी लेने देते नहीं। उसकी नजरें अजगर- सी फैली पाइपलाइन पर टिकी हुई थी। सहसा डब्बे से दौड़कर हथौड़ा उठा लाई और दोनों हाथों से उसने पाइप के ज्वाइंट पर दे मारा। देखते ही देखते फ़ौव्वारे की शक्ल में पानी का स्रोत खुल गया। तालियां बज उठी। सब ने चुल्लू भर - भर पानी पिया। पानी पीते ही चेतना लौटी। उसी आवेग के तहत जिसके हाथ जो आया, उठाकर चल पड़ा। औरतों और बच्चों तक ने हाथ में ईंट- पत्थर उठा लिए। सबको घेरकर तीरंदाज चल रहे थे अर्द्धवृत्ताकार।"(8) फैक्टरी के खिलाफ संघर्ष करने का उनका फैसला अटल था, इसीलिए ही उनमें आत्म धैर्य एवं विरोध करने का हिम्मत आ चुका था। पचास मजदूर जो फैक्टरी में चमचा होकर काम करते थे, वे फैक्टरी की ओर बढ़ रहे थे तो फैक्टरी विरोधी लोगों ने उन्हें रोकने की हिम्मत की। लेकिन अपने अहंकार में उन्होंने एक न सुनी और आगे बढ़ गए। "एक माझी दौड़कर उनके सामने आकर खड़ा हो गया मगर उसकी गर्दन पकड़ कर ज़मीन पर ढेल दिया गया। लेकिन इसके बाद वे आगे एक कदम भी न बढ़ सके। चार-चार तीर लोहे फाटक पर टन्न-टनान बरसे। फिर तो ईंट-पत्थरों की वह बौछार हुई कि पचास मज़दूरों को संभलने का मौका ही न मिला। तीन तरफ से घेर कर उन्हें निशाना बनाया जा रहा था। दस ही मिनट में पचास मज़दूर घायल होकर भागे। फोकल कुचले चींटें-सा वही छटपटाता पड़ा रहा। आवेग की तीसरी लहर कूड़े गाड़ी से जा टकराई। खलासी ने रमिया की छाती पर हाथ रख दिया था। मैना ने जैसे ही देखा, बांस की फट्टी लेकर उसे दौड़ा लिया। खलासी बचने के लिए ट्रक के गिर्द चक्कर काटने लगा। मैना पीछे दौड़ते दौड़ते थक गई तो रुककर उलटी दिशा में घूम कर उसे दे मारा। लोगों के 'अब छोड़ भी दो' कहने के बावजूद भी वह उसे तब तक पीटती रही, जब तक मोडल ने उसे पकड़कर जबरन हटा कर ट्रक पर लाद कर रवाना नहीं कर दिया। ट्रक रवाना होकर गया। यह तो आवेग का दौरा- दौरा था।"(9) तेज़ाब की फैक्टरी को बंद करवाने के लिए जो विरोध मैना ने पूरे गांववालों के साथ किया, उसका एक सशक्त रूप था यह। इस संघर्ष के बाद कुछ लोग पुलिस के डर से भागे थे, मगर बाद में उन्होंने चूहे - बिल्ली के खेल को समाप्त करके पुलिस के सामने अपने आप को पेश किया।

आज़ादी के बाद हमारे देश में खनन उद्योग के विकास पर ध्यान दिया गया तथा भारी उद्योगों की स्थापना के कारण खनन उद्योग का तेजी से विकास हुआ। खनन से संबंधित गतिविधियों का अत्यंत दूरगामी प्रभाव हमारे पर्यावरण पर पड़ता है। सामान्य लोगों का दैनिक जीवन प्रत्यक्ष एवं

अप्रत्यक्ष रूप से खनन गतिविधियों पर ही निर्भर करता है। खनिज पदार्थों की बढ़ती मांग तथा देश में बढ़ती बेरोज़गारी ने अवैध खनन के धंधे को बढ़ावा दिया है। इन सब का परिणाम यह हुआ कि जिस गति से खनन उद्योग का विकास हो रहा है, उसकी दुगुनी गति से पर्यावरण के क्षरण की प्रक्रिया में वृद्धि हो रही है। खनन प्रक्रिया के कारण पूरा का पूरा भू-दृश्य बुरी तरह बिगड़ जाता है। भूमि, वायु, प्राकृतिक जल स्रोत और जल स्तर पर भी प्रभाव पड़ता है। मैदानी क्षेत्रों की तुलना में पर्वतीय क्षेत्रों में चल रही खनन गतिविधियों के कारण अधिक तबाही होती दिखाई गई है। जंगल साफ कर दिए जाने के कारण नंगे हो चुके पहाड़ी में भूस्खलन, धंसान आदि घटनाएं बढ़ती जा रही है। खनन क्षेत्रों में धरती से खनिज पदार्थ आदि निकाल लेने के बाद पूरा क्षेत्र कई वर्षों तक बेकार और बंजर बना रहता है। यह क्षेत्र पेड़-पौधों तथा जीव-जंतुओं से रहित होकर अपना मौलिक स्वरूप खो चुका है। वनस्पति, जीव- जगत और प्राणी-जगत का आधार मानी जाने वाली उपजाऊ मिट्टी भी नष्ट हो चुकी है। प्राकृतिक संसाधनों का अवैज्ञानिक दोहन, प्रदूषण में वृद्धि, पर्यावरण का विनाश आदि कुछ ऐसी समस्याएं हैं, जिनका सामना अधिकांश खनन क्षेत्रों को करना पड़ रहा है। संजीव का उपन्यास 'सावधान! नीचे आग है' और 'धार' कोयलांचल के संघर्ष को उजागर करती है। चंदनपुर के कोयला खदान पर आधारित उपन्यास 'सावधान! नीचे आग है' में कोयला खदान के आग में कई लोग जल गए हैं। चंदनपुर गांव के लोग इस खदान की सज़ा भोग रहे हैं। यह इलाका बैठ रहा है। गांव वालों को पीने का पानी नहीं क्योंकि दामोदर नदी का पानी, कोयला खदान का गंदा पानी बहने से दूषित हो गया है। यह पानी पीकर पशु-पक्षी तक मर रहे हैं। झरिया गांव की ज़मीन के नीचे करोड़ों टन कोयला जल जाने से लोगों का डर है कि यह समूचा इलाका बैठ जाएगा और जल जल कर एक दिन सब कुछ खत्म हो जाएगा। उधम सिंह जब पहली बार झरिया आया था, तब एक सूचना-पट्ट उसकी आंखों के आगे उभर आया था - "सावधान! सड़क के नीचे आग है"। (10) झरिया में दूर-दूर तक सिर्फ धुआं और काली धूल थी। इसी कारण से ही वहां मज़दुर लोगों का हालत शोचनीय थी। वे कई बीमारियों के शिकार थे और कंगाल भी थे।

'पांव तले के दूब' में बिजली के कारखाने से गंदा पानी मनसा नाले में बहाया जाता है और कारखाने से ज़हरीली हवा भी उठती है। उससे लोग रोगग्रस्त बन जाते हैं। पेड़-पौधों के पत्ते भी काले हो गए हैं। उपन्यास में मुख्य पात्र सुदीप्त की डायरी में बिजली की प्लांट की वजह से हो रहे प्रदूषण की समस्या सूचित है - "जब से प्लांट बना है चिमनी से उड़ने वाली राख और गैसों के चलते प्रदूषण बढा है और ज़मीन बंजर होती चली गई है। अब इन गांवों के खेतों में पहले का एक-चौथाई अनाज भी नहीं पैदा होता। रोजी-रोजगार का यह हाल है कि प्लांट बनने के पूर्व जो उम्मीद थी कि स्थानीय लोगों को रोजगार मिलेगा, वह उम्मीद पूरी नहीं हुई। मुश्किल से दो प्रतिशत स्थानियों को काम मिला है। कुओं के एक सिरे से प्रदूषित हो जाने और सूख जाने के बाद पानी का एकमात्र स्रोत मनसा नाला बचता है, जिसमें प्लांट और कॉलोनी का तमाम प्रदूषित जल बहाया जाता है। बीसों लोग फालिज के मारे हुए हैं। कुल मिलाकर यह कि गांवों की जिंदगी पहले से ज्यादा बदहाल है, अत: स्थानीय लोग इसे मित्रवत नहीं बल्कि घृणा और शत्रुवत भाव से देखते हैं।"(11) सुदीप्त अपने दोस्त समीर को पचपहाड़ के क्षेत्र के आदिवासियों की रोगग्रस्त जिंदगी दिखाता है। समीर उन गरीबों की दुर्बल काया को देखकर बिल्कुल हैरान हो जाता है। "कुपोषण और रोग की मारी छायाएं और उन पर चिपकी फटी-फटी उजली आंखें। अगर रात में कोई देखे तो निश्चय ही डर जाए।"(12) माझी हडाम के घर जाकर उसकी लकवा की मारी अठारह साल की बेटी जानकी को देखता है। प्रदूषित एवं ज़हरीली पर्यावरण का शिकार बनकर जानकी, हाथ-पांव-चेहरा सूखे के मरीज़ जैसे पतले और डरावने बन गए हैं। उपन्यास में हर आदिवासी पात्र अपनी इस बदहाल में उलझा हुआ हर प्रतिकूल परिस्थिति से संघर्ष करता हुआ दिखाई देता है।

'जंगल जहां शुरू होता है' उपन्यास में जंगल की सुरक्षा की ओर संकेत किया गया है। डाकू और पुलिस के बीच के संघर्ष के कारण जंगल का पारिस्थितिक संतुलन बुरी तरह से बिगड़ गया है। पुलिस, ज़मींदार वर्ग तथा डाकू ही जंगल के सौंदर्य को पूरी तरह नष्ट करते हैं। इन लोगों के अपना अधिकार दिखाने एवं कायम रखने की कोशिश, जंगल के पारिस्थितिक तंत्र पर बुरा असर डालता है।

**जंगल के संकट के विरुद्ध संघर्ष**

औद्योगीकरण के विकास के लिए सरकार ने निजी व सरकारी संस्थानों के लिए ज़मीनों का अधिग्रहण किया और लाखों लोग विस्थापित हो गए। कई बांधों के निर्माण के लिए हजारों एकड़ जमीन हड़पी गई। कोयला खदानों में विशेषत: मशीनीकृत खनन प्रणाली के चलते जंगल-दर-जंगल उजड़ गए। भारी विस्फोटों और भूगर्भ परियोजनाओं के कारण ज़मीन धंस गई और जंगल के अस्तित्व पर बुरा प्रभाव पड़ गया। गलत सरकारी नीति के कारण अंधाधुंध मशीनीकरण शुरू किया गया तथा जंगल की कटाई भी बढ़ती गयी। परिणामस्वरुप जंगल का हकदार आदिवासी जनता, भूमि विहीन हो गए। शोषक शक्तियों द्वारा अपने स्वार्थ लाभ के लिए जंगली संपत्ति पर कब्ज़ा करके उसे बाहर ले जाने पर आदिवासियों का रोजगार भी समाप्त हो गया। आज अपनी ही संपत्ति जंगल में आदिवासियों के प्रवेश को रोकने लगा है। "जिस धरती पर वे बसते हैं, उसके गर्भ में खनिज है यानी सम्पदा है, ऊपर नदियां और जंगल है - पर वहां उनका प्रवेश वर्जित है। नदियां कोयले की धूल से काली होकर प्रदूषित हो गई - उनका पानी किसी काम का ना रहा - जंगल कट गए, ज़मीनें गड्ढा और पोखर बना दी गई - खेत धंस गए, पानी के स्रोत सूख गए या नीचे चले गए या पहुंच के बाहर हो गए। आग पर बैठा है आज इस क्षेत्र का आदमी। धरती के नीचे आग लगी है - कब धंस जाएगी धरती - पता नहीं है।" (13) 'पांव तले की दूब' उपन्यास के केंद्र में पंचपहाड़ क्षेत्र है जहां झारखंड आंदोलन ज़ोर से उठा था। यह कथा डोकरी ताप विद्युत संस्थान के मंच पर घटित होती है। उपन्यासकार इसके माध्यम से यह जताना चाहता है कि औद्योगीकरण किस प्रकार गांव तथा आदिवासियों को विस्थापित कर रहा है। अधिकारी और पूंजीपति वर्ग न केवल आदिवासियों का शोषण करते हैं अपितु राष्ट्रीयता की लूट भी करते हैं। औद्योगीकरण की नीति और राजनीतिक कुटिलता के चलते आदिवासी बुरी तरह छटपटाते हैं। उपन्यास का प्रधान पात्र सुदीप्त परिस्थितियों को बदलने की कोशिश करता है। वह आदिवासी समाज के लिए बेहतर दुनिया का निर्माण करना चाहता है, इसके लिए प्रयास भी करता है। झारखंड के आदिवासी समाज की सच्चा हालत संजीव ने सुदीप्त के शब्दों में व्यक्त किया है:- "झारखंड खनिज संपदा का भंडार है। नए नए उद्योग लगाए जा रहे हैं, नई दुनिया की पगध्वनी! अगर सरकार ईमानदारी से इनका हक दे दे तो एक ही छलांग में कई मंजिलें अपने-आप तय हो जाती है - पर अन्याय देखो,आदिवासियों को, जिनकी ज़मीन पर यह कारखाने लग रहे हैं, उन्हें टोटली डिप्राइव किया जा रहा है - इस संपत्ति में उनकी भागीदारी तो खत्म की ही जा रही है, उन्हें ज़मीन से भी बेदखल किया जा रहा है, मुआवजा भी अफसरों के पेट में।" (14)

संजीव के उपन्यासों में पारिस्थितिक संदर्भों का जिक्र हमेशा हुआ है। कोयलांचल के दमघोटु माहौल में हो रहा संघर्ष एवं विस्थापन की त्रासदी में

जंगल का संकट उनकी रचनाओं में प्रमुख स्थान पाते हैं। पिछले कई दशकों में 'पर्यावरण' देशीय तथा अंतर्देशीय चर्चा में एक मुख्य विषय बना है। जंगल की बेरहम कटाई, वन संपत्तियों की कमी, प्रदूषण आदि समस्याएं केवल देश की प्रगति पर ही नहीं बल्कि देश की सुरक्षा पर भी सवाल उठाती है। पारिस्थितिक शोषण से हमारा पारिस्थितिक संतुलन पूरी तरह बिगड़ गया है। मानव समाज का अस्तित्व एवं मानव संस्कार प्रकृति से ही उत्पन्न हुआ है। इसे याद में रखकर, पारिस्थितिक संरक्षण के लिए नई योजनाओं का आविष्कार करके, विकास के संकल्पों में परिवर्तन लाकर, प्रकृति को विनाश से बचाने के लिए राष्ट्रों को एक साथ कदम बढ़ाने होंगे।

**सन्दर्भ सूची**


1. संजीव: सावधान ! नीचे आग है, पृ.सं. 12
2. संजीव: धार, पृ.सं. 41
3. संजीव: पांव तले की दूब, पृ.सं. 79
4. संजीव: धार, पृ. सं. 19
5. संजीव: धार, पृ. सं. 22
6. संजीव: धार, पृ. सं. 22-23
7. संजीव: धार, पृ. सं. 37
8. संजीव: धार, पृ. सं. 58
9. संजीव: धार, पृ. सं. 59
10. संजीव: सावधान ! नीचे आग है, पृ.सं. 11
11. संजीव: पांव तले की दूब, पृ.सं. 84
12. संजीव: पांव तले की दूब, पृ.सं. 77
13. रमणिका गुप्ता: आदिवासी: विकास से विस्थापन, पृ. सं. 10
14. संजीव: पांव तले की दूब, पृ.सं. 20